International Journal of Geography, Geology and Environment

P-ISSN: 2706-7483
E-ISSN: 2706-7491
IJGGE 2022; 4(2): 141-146
Received: 18-08-2022
Accepted: 22-09-2022

Dr. Poonam Saini
Assistant Professor,
Department of Geography,
Government College Nechhwa,
Sikar, Rajasthan, India

Corresponding Author:
Dr. Poonam Saini
Assistant Professor,
Department of Geography,
Government College Nechhwa,
Sikar, Rajasthan, India

कृषि कारक के रूप मे प्रयुक्त मृदा संसाधन के निर्माण मे सहायक कारको एवं इसके संघटक तत्वो का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Dr. Poonam Saini

DOI: https://doi.org/10.22271/27067483.2022.v4.i2b.127

सारांश
कृषि एक असमाप्य तथा अक्षय संसाधन हैं। इसके अन्तर्गत प्राकृतिक क्रियाओं से सम्बन्धित संसाधन जैसे जल, सौर शक्ति, पवन शक्ति, मृदा, वनस्पतियों के अलावा प्रजननरत जैव साधनो को सम्मिलित कीया जाता हैं। यद्यपि किसी भी संसाधन को अक्षय मानना वर्तमान काल में भ्रामक हैं क्योंकि समय के साथ जो तकनीकी प्रगति हो रही हैं उसका दुष्प्रभाव अनेक नवीनीकरणीय संसाधनों को नष्ट कर रहा हैं। यह नवीन तकनीक का ही परिणाम हैं कि खाद्यान्नों की बढ़ती मांग को संतुष्ट करने के लिए कृषि कार्यो में विभिन्न प्रकार के फर्टिलाइजर्स तथा संकरित बीजो का उपयोग हो रहा है। इसके अलावा कृषि क्षेत्र को बढ़ाया जा रहा हैं जिसके लिए प्राकृतिक वनस्पति का निर्दयता से शोषण किया जा रहा हैं। परिणामतः क्षेत्र वनस्पति विहीन हो रहे हैं। तथा विलुप्त होते वन क्षेत्रो के साथ ही अनेक वन्य जीवों की प्रजातियाँ लुप्त हो रही हैं। मिट्टी की संरचना इस तरह की है कि उसमें कीट आसानी से पनप जाते हैं। ये कीट फसलों की जड़ो में पहुँचकर उसको नष्ट कर देते हैं। जिससे पादप रोग ग्रस्त हो जाता हैं। अतः फसलों को कीटों के प्रकोप से बचाने के लिए कीटनाशी रसायनों का प्रयोग करते हैं। ये जहरीले रसायन न केवल हमारे शरीर में पहुँचकर हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता को कम करते हैं अपितु भूमि में उपस्थित उपयोगी सूक्ष्मजीवों को नष्ट करके मृदा की उर्वरक शक्ति को कमजोर करते हैं। ऐसी मृदा में उत्पन होने वाली खाद्य सामग्री में उन सभी पौष्टिक तत्वो का अभाव होता हैं जो हमारे शरीर को स्वस्थ रखने के लिये आवश्यक होते हैं।

कूटशब्द : जैविक भट्ठी, उच्चावच्च, अपरदन, मृदा परिच्छेदिका, ह्यूमस, अन्तःसंचरण, भूमि क्षमता अवस्था, परासरण

प्रस्तावना
कृषि कार्यो में मिट्टियों का विशेष महत्व है। जीव–जन्तु पौधे–वनस्पति एवं मनुष्य सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मिट्टी से प्रभावित है, यहॉ तक की प्राकृतिक दशाएँ भी मिट्टियों से सम्बन्धित होती है। मिट्टियों के निर्माण में प्राकृतिक तत्वों का विशेष योगदान रहता है। मृदा तन्त्र पर्यावरणीय एवं जीविय तत्वों का प्रतिफल होता है तथा इसका जलवायु, वनस्पति, जन्तु, नीचे स्थित आधार रोल धरातल तथा समय के साथ गहरा सम्बन्ध होता है। मृदा तन्त्र के अध्ययन के अन्तर्गत निम्न पक्षों को सम्मिलित किया जाता है। मृदा के संधटक, मृदा का वर्गीकरण, मृदा के निर्माण की प्रक्रियाऐं तथा उसका समय के परिवेश में विकास।

मृदा तथा पौधे एक दूसरे के अविभाज्य अंग होते है क्योकि इनमें पदार्थो तथा ऊर्जा का आदान–प्रदान सतत् चलता रहता है। उदाहरण स्वरूप वनस्पतियों तथा स्थित अपक्षयित शैल की पारस्परिक क्रियाओं के फलस्वरूप मृदा का निर्माण होता हैं और इसमें पोषक तत्वों को निर्माण एवं भण्डारण होता रहता है। इन पोषक तत्वों को प्राप्त करके ही पौधे विकसित होते रहतें है और जब ये पौधे नष्ट होते है तथा सडने–गलने लगते है तो इनके पोषक तत्व मृदा में पुनः पहुचतें है तथा पौधे पुनः इन पोषक तत्वों का उपयोग करते है।

मृदा को वास्तव में जीवमण्डल या जीवन परत का हृदय कहते है क्योकि मृदा उस मण्डल का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें पौधो के पोषक तत्वों का उत्पादन तथा रख–रखाव होता है तथा ये पोषक तत्व पौधे अपनी जडो के द्वारा भूमि से प्राप्त करते है। अतः कृषि कार्यो के लिये मृदा एक आवश्यक संसाधन का कार्य करती है। जिस प्रकार कृषि के लिये जल एक आवश्यक संसाधन है तो मृदा संसाधन भी एक आवश्यक संसाधन है। इन संसाधनो के बिना कृषि कार्य की कल्पना भी नही की जा सकती है। यह फसलों को एक आधार प्रदान करती है।

मृदा – अर्थ, परिभाषाएं तथा महत्व

मृदा संसाधन के अन्तर्गत मिट्टियों से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों का अध्ययन किया जाता हैं। सामान्यतः धरातल की ऊपरी परत जो छाले तथा असंगठित पदार्थो का समूह होता है को मृदा कहते है। यह शैलों के विघटन तथा वियोजन से बनती है।

जे0 एस0 जासेफ के अनुसार

''मिट्टियॉ जन्तु, खनिज एवं जैविक पदार्थो से निर्मित प्राकृतिक वस्तु होती है जिनमें विभिन्न मोटाई के विभिन्न मण्डल होते है। मृदा के ये सस्तर आकारिकी, भौतिकी एवं रासायनिक संघटन तथा जैविक विशेषताओं के दृष्टिकोण से निचले पदार्थो से अलग होते है।'' इस तरह मिट्टियों के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाने वाले समस्त पदार्थो की गहराई एवं मोटाई को दो भागों में बाटा जाता है।

वास्तविक मृदा

यह मृदा के सबसे ऊपरी भाग को प्रदर्शित करती है। यही मृदा पौधो व समस्त जीवों को जीवन प्रदान करती है और इसी मृदा में कृषि कार्य किया जाता है तथा समस्त पौधे उगते व पनपते है अर्थात खाद्यान्न उत्पादन के लिये यही मृदा उपयोगी है।

निचली मृदा

इसके अन्तर्गत आधार शैल के वियोजित तथा विघटित ऊपरी भाग को सम्मिलित करते है। इस मृदा में उन पोषक तत्वों का अभाव होता है जो पौधो के विकास के लिये अति आवश्यक होते है। अतः उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि किसी भी स्थान में भूतल की ऊपरी सतह से लेकर नीचे स्थित आधार शैल के बीच स्थित ढीले पढार्थो को मृदा या मिट्टी कहते है। इस मृदा तन्त्र के सबसे ऊपरी भाग को अपरिवर्ती मृदा या टापस्वायल तथा नीचले भाग को निचली मृदा या सबसोयल (Subsoil) कहते है। उपरी मृदा को ही वास्तविक मृदा कहते है क्योकि इसी में पौधो के लिये सारे आवश्यक तत्व इसमें ही निहित होते है।

इस तरह मृदा तन्त्र एक ऐसा मार्ग है जो विभिन्न जीवों में ऊर्जा के स्थानान्तरण तथा पोषक तत्वो के चक्रण, गमन, एवं संचरण हेतु अति महत्वपूर्ण होता है। यह मृदा तंत्र स्थलमण्डल पर स्थित वनस्पति आवरण एवं नीचे स्थित आधार शैल आवरण के मध्य पतले मण्डल के रूप मे जैविक भट्ठी की तरह होता है। जिसे जैविक कारखाने के नाम से भी जाना जाता है।

मृदा निर्माण में सहायक कारक

सामान्यतः मिट्टी का निर्माण कई भौतिक प्रक्रियाओं द्वारा होता है जैसे चट्टानों की टुट–फूट, जलवायु, वनस्पति, ठाल तथा कालावधि आदि कारकों के द्वारा। मिट्टियों के निर्माण की प्रक्रियाये तथा मृदा के गुण एवं इनकी विशेषताऐं मुख्य रूप से इन पॉच कारकों से प्रभावित तथा नियन्त्रित होती है।

1. जलवायु
2. जैविक कारक
3. उच्चावचन या धरातल
4. आधार शैल तथा पदार्थ
5. समय

मिट्टियाँ जलवायु, जीवों, उच्चावचों, आधार शैल तथा पदार्थो और समय का प्रतिफल होती है जिसे निम्न सूत्रो के द्वारा व्यक्त किया जा सकता हैः–

S= f (cl., o, r, p, t…..)

यहॉ–
S= मृदा (Soil)
f= प्रतिफल है (is function of)
cl= जलवायु कारक (cl=climate)
o= जैविक कारक (o= organisms)
r= उच्चावचन या धरातलीय कारक (relief या topographic factor)
p= आधार शैल के पदार्थ (parent materials)
t= समय कारक
अतः मृदा इन सभी कारकों का प्रतिफल है।

जलवायु (climate)

मिट्टियों के निर्माण मे चट्टानों का विशेष महत्व होता है। इसी कारण प्राचीन चट्टानों के गुण, खनिज तथा वनस्पति के अंश मिट्टियों में मिले होते है और इन पैतृक चट्टानों पर जलवायुवीय सम्बन्धी कारक का प्रभाव पडता हे। जलवायु सम्बन्धी कारक से शैलों का अपक्षय होता है। अतः गर्मी के मौसम में अत्यधिक ताप के कारण चट्टानें फैलने लाती है तथा तापक्रम होने पर सिकुड जाती हैं। इन पर मौसम ही नही अपितु दिन–रात के तापमान का भी असर पडता है दिन में तापमान के अधिक होने पर फैलना व रात में ताप कम होने पर सिकुडना की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इससे चट्टानों का अपरदन प्रारम्भ हो जाता है और इनसे शैल चूर्ण का निर्माण होने लगता है यह बहुत ही बारिक होता है और इसी बारिक चूर्ण के साथ मिट्टी निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है अपक्षय व अपरदन से चट्टानों के कण वियोजित हो जाते है अधिक ताप तथा अधिक वर्षा वाले भागों में मिट्टी निर्माण की प्रक्रिया वर्ष भर चलती रहती है। ऐसे स्थानों पर जितनी तेजी से मृदा का निर्माण होता है उतनी तेजी से उसका अपक्षालन भी हो जाता है। जिन क्षेत्रो में कोशिका क्रिया प्रभावी होती है वहॉ मिट्टी की ऊपरी परत में अधिक पोषक तत्व पाये जाते है वहॉ तापमान औसत रहता है तथा वर्षा मध्यम प्रकार की होती हैं।

प्रायः शीत क्षेत्रो में मृदा निर्माण की प्रक्रिया मन्द गति से चलती है क्योकि वहॉ एक ही प्रकार का मौसम रहता है वहॉ सामान्यतः वर्षभर सर्दी ही रहती है। अतः मौसम की एकरूपता के कारण अपक्षय व अपरदन की प्रक्रिया बहुत ही कम होती है वहॉ बैक्टिरिया सक्रिय नही रह पाते हैं। तापमान मृदा की परिच्छेदिका में रासायनिक, भौतिक तथा जैविक क्रियाओं एवं अभिक्रियाओं की दरों में परिवर्तन करता रहता है। यदि मृदा के तापमान में वृद्धि होती है तो उससे रासायनिक अभिक्रियाये तथा वियोजक जीवों द्वारा विभिन्न जैविक पदार्थो के वियोजन की रफ्तार तेज हो जाती है।वास्तव में आधार शैल के अपक्षय (विघटन एवं वियोजन) द्वारा ही मृदा का निर्माण होता है। किसी भी स्थान विशेष में जल की मात्रा की अधिकता या कमी मिट्टियों के रासायनिक एवं भौतिक गुणो को निर्धारित करते है।

मूल पदार्थ (Parent materials)

किसी भी स्थान विशेष में मृदा निर्माण के लिये वहॉ स्थित आधार चट्टान में अपक्षय होना आवश्यक होता है। मृदा परिच्छेदिकाओं का संघटन आधार शैलों के खनिजीय संघटन से ही प्रभावित एवं निर्धारित होता है अर्थात चट्टानों में जिस प्रकार के खनिज तत्व पाये जाते है उसी प्रकार के खनिज उस चट्टान के अपक्षय से बनी मृदा में पाये जाते है। यदि किसी चट्टान में खनिज तत्वों की मात्रा अधिक होती है तो उससे निर्मित मृदा भी अत्यधिक उपजाऊ होगी। मौलिक शैलो की सरंचना भी मिट्टियों के गुणो को प्रभावित करती है।

धरातलीय कारक

मिट्टी निर्माण में धरातलीय ढाल या उच्चावच भी प्रभावित करते है। विभिन्न धरातलीय कारक जैसे ऊंचाई, ढाल आदि जल के अपवाह तथा जल के द्वारा होने वाले अपरदन के स्वभाव, दर एवं

मात्रा को प्रभावित करते है तथा जल अपवाह एवं अपरदन भी मृदा निर्माण की प्रक्रियाओं को प्रभावित करता है और इस प्रकार मिट्टियों के विभिन्न गुणों एवं उनकी विशेषताओं का निर्धारण होता है जहॉ धरातल समतल होती है वहॉ अपवाह का आदर्श स्वरूप पाया जाता है। सपाट धरातल होने के कारण विभिन्न पोषक तत्व मिट्टी की परतों, में ही कायम रहते है एवं गहरी मिट्टी का निर्माण होता है चूंकि पोषक तत्व मिट्टी में रहने से मिट्टी में उर्वरता अधिक होती है।

इसी प्रकार यदि धरातल ढालू है तो मिट्टी के पोषक तत्व बह जाते है जबकि चौरस तरन्तु निचले धरातल पर जलभराव हो जाता है जिससे चिपकने वाली मतिका मृदा (Clay soil) की एक मोटी परत बन जाती है। अतः मृदा निर्माण में धरातल का ढाल भी महत्वपूर्ण कारक होता है। इन कारकों में मुख्यतः ढाल की प्रवणता (Slope gradient), ढाल की लम्बाई एवं ढाल पक्ष आदि सभी कारक मिट्टियों के रासायनिक, भौतिक एवं जैविक गुणों को बडे पैमाने पर प्रभावित करते है।

जैविक कारक

जैविक कारकों में मुख्यतः वनस्पति, जन्तु तथा सूक्ष्य जीवों को सम्मिलित किया जाता है ये विभिन्न जैविक कारक मिट्टी के निर्माण मे अपनी महती भूमिका निभाते है। पौधो की विभिन्न विशेषतायें होती है जैसे–पेडों से पतियों का गिरना, भूमि पर पतियो का ढेर (पर्णढेर) के रूप में एकत्रित होना, तना प्रवाह तथा हवाई सरिता, जड़ तन्त्र तथा जड़ प्रतिरूप, पौधो तथा जन्तुओं के आन्तरिक गुण एवं बाह्य गुण, उनकी प्रतिस्पर्धा आदि सभी किसी भी स्थान या क्षेत्र की मिट्टियों के गुणो को प्रभावित करती है।

मिट्टियों में पाये जाने वाले जैविक घटकों से उनकी उर्वरता निश्चित होती है। पेड़ों की पतियॉ, जडो व डंठलों आदि के टुट कर भूमि में गिरने व उनके सड़ने व गलने से मिट्टी में जीवाणु की सक्रियता बढ जाती है जिससे मृदा का स्वास्थ्य उतम बना रहता है। जिस मिट्टी में बैक्टिरिया, केंचूए, चींटी, गुबरैला, दीमक तथा अन्य सूक्ष्य जीवाणु जीवित रहते है वो मिट्टी कृषि के लिये या फसलोत्पादन के लिये सर्वाधिक उपर्युक्त होती है और जिस में इनका अभाव होता है वह कृषि उत्पादन के लिये अयोग्य हो जाती है।

- पौधे की जड़े मिट्टियों के कर्णो को बांधकर उन्हे संगठित रखते है। अतः पौधो की जडे मिट्टियों में मृदा समूह का निर्माण करती है। पौधे मृदा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण करती है।
- विभिन्न प्रकार के छोटे–बड़े जन्तु एवं उनके क्रियाकलाप मिट्टी निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करते है तथा परिवर्तित करने में अहम भूमिका निभाते है। वृहदस्तरीय एवं मध्यमस्तरीय जन्तु जैसे खरगोश, छछूंदर, प्रेयरी कुते, भूमिवासी गिलहरी, अदबिलाव, चूहे आदि अपनी विभिन्न क्रियाओं जैसे बिल खोदना, जैविक तथा अजैविक पदार्थो का स्थानान्तरण करना एवं उनकों मिश्रित करना आदि क्रियाओं के द्वारा मिट्टियों के गुणों को प्रभावित एवं परिवर्तित करते है। ये सभी जीव–जन्तु मृदा के गुणों एवं विशेषताओं को सबसे अधिक प्रभावित करतें है।

मध्यमस्तरीय जन्तुओं के अन्तर्गत केंचुआ, चींटी, कुटकी आदि को सम्मिलित किया जाता है जो मिट्टी को प्रभावित करते है। ये सूक्ष्म जीव जैविक पदार्थो को वियोजित करके उन्हे पोषक तत्वों में रूपान्तरित करते है और ये पोषक तत्व ही मिट्टियों की उपजाऊ बनाते है। केंचुआ मिट्टियों को सबसे अधिक उपजाऊ बनाता है।

कालावधि (Time factor)

मिट्टियों के उचित व पूर्ण विकास में कई सालों या हजारो वर्षो का समय लग जाता है। लगभग 500 से 1000 वर्षो तक का समय लगता है कम समय में बनने वाली मिट्टियो में पार्श्विका का विकास नही हो पाता है। ऐसी मिट्टियॉ अपरिपक्व होती है। अतः मिट्टी के निर्माण की प्रक्रिया बहुत लम्बी चलती है।

मिट्टी निर्माण में जलीय कारक का भी महत्वपूर्ण स्थान है। जल की अनुपस्थिति में शैल कण भुरभुरे हो जाते है जिससे वह संगठित नही रह पातें है। जल एक तरफ तो मिट्टी में पाये जाने वालें विभिन्न प्रकार के पोषक तत्वों व खनिजों को पौधो की जड़ों तक पहुचाने का कार्य करता है तो दूसरी और मिट्टी के कर्णो को संगठित रखने में भी मदद करता है। बिना जल के मिट्टी मरूस्थल है तथा बिना मिट्टी के जल निरर्थक है।

मृदा तन्त्र के संघटक

मृदा की संरचना तथा संघटक का अध्ययन सामान्य रूप से लम्बवत् सस्तरों के माध्यम से किया जाता है। मृदा तन्त्र के ऊपरी सतह से लेकर नीचलें भाग तक स्थित सभी संस्तरों को मिश्रित रूप से मृदा परिच्छेदिका (Soil profile) कहा जाता है और इस मृदा परिच्छेदिका का विस्तार जो है वो मृदा को ऊपरी सतह से लेकर नीचे स्थित आधार शैल जो अपक्षय से प्रभावित नही होती है वहॉ तक होता है।

मृदा तंत्र के प्रमुख चार संघटक होते हैः–

1. वनस्पति समूह, जन्तु समूह तथा जैविक पदार्थ।
2. अजैविक या अकार्बनिक खनिज।
3. मृदा घोल
4. मृदा वायुमण्डल

किसी भी स्थान कि मृदा के संघटन एवं उसकी विशेषताओं को समझने के लिये मृदा तन्त्र के इन संघटको का अध्ययन करना अति आवश्यक होता है।

मृदा के प्रमुख संघटकः

मृदा के प्रमुख संघटक

क्र.सं.	प्रमुख संघटक	संघटक का प्रतिशत
1.	जीवित जीव एवं जैविक पदार्थ	5 से 12
2.	खनिज पदार्थ	38 से 47
3.	मृदा घोल	15 से 35
4.	मृदा वायुमण्डल	15 ` 35

वनस्पति, जन्तु समूह तथा जैविक पदार्थ

मृदा मण्डल के जीवित जीवो के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के छोटे–बडे पौधे तथा जीव–जन्तुओं को तथा उनसे प्राप्त होने वाले पदार्थो को सम्मिलित किया जाता है तथा जैविक पदार्थो के अन्तर्गत वनस्पति एवं जन्तुओं के अजीवित वायोमास को शोमिल किया जाता है। इन्ही जैविक पदार्थो से मृदा में रहने वाले अधिकांश जीवों को आहार तथा ऊर्जा निकलती रहती है। मृदा के समस्त संघटन का 5 से 12 प्रतिशत भाग का निर्माण वनस्पति तथा जन्तुओं के समूह एवं जैविक पदार्थ मिलकर करते है। मृदा में रहने वाले इन जीवो को इडैफन्स या मृदा–जीव कहते है। कुछ जीव मृदा में रहते हे तो कुछ भूतल पर निवास करते है तथा कुछ दोनो ही प्रकार के वातावरण मे रहते है। मिट्टी में रहने वाले जीवों का औसत आकार 20 सेण्टीमीटर से लेकर 20 माइक्रोमीटर तक की लम्बाई को होता है। इन जीवों की मुख्यतः 3 श्रेणियॉ होती है।

बड़े आकार वाले जीव

बड़े आकार वाले जन्तु मिट्टियों तथा पतियों ढेर मे पाये जात है। इनके शरीर का आकार एक सेंटीमीटर से अधिक ही होता है। कुछ जीवों में रीढ की हड्डी होती है तो कुछ में नही होती है।

रीढ की हड्डी वाले जीवों में मुख्यतः स्तनधारी जीव प्रमुख है जैसेः– छछूंदर, अर्माडिलले, खरगोंश गिलहरी, भूगिलहरी तथा तीदणदन्ती जन्तु जैसे– चूहा आदि आतें है। पेट के बल रेंगने वाले जीवों में छिपकली, सॉपें आदि महत्वपूर्ण है। जिन जीवों में रीढ़ की हड्डी नही होती है उनमें मुख्यतः भूकीट, घोंघा, शम्बुक, कीट, मकडा तथा मकडी, कुटकी, किलनी आदि को सम्मिलित किया जाता है।

मध्यम आकार वाले जन्तु

इस प्रकार के जीवों की लम्बाई एक सेण्टीमीटर से 0.2 मिलीमीटर के बीच होती है। इसमें मुख्यतः छोटे आकार वाली कुटकी, मकडा–मकडी की विभिन्न प्रजातियों स्प्रिंगटेल, कीट लारवा, सहस्त्रपाद कीट, समपाद जीव आदि महत्वपूर्ण जीव है।

लधु आकार वाले जीव

इन जीवो के शरीर के लम्बाई 0.2 मिलिमीटर से कम होती है। मिट्टी में इस प्रकार के जीव असंख्य मात्रा में पाए जाते हैं। इनमें बैक्टीरिया सर्वप्रमुख होते है। बैक्टीरिया मृदा मण्डल के सबसे महत्वपूर्ण सूक्ष्म जीव होते है ये मिट्टी में रहकर कई प्रकार के कार्य सम्पन्न करते है जैसे– वनस्पतियों तथा लकडियों को सडाना–गलाना, जैविक पदार्थो का वियोजन करना, ह्यूमस का निर्माण करना, पोषक तत्वों का चक्रण करना आदि।

- सूक्ष्म वनस्पतियों एवं सूक्ष्मजीवों के अन्तर्गत बड़े पौधे खासकर उनकी जडे, कवक, बैक्टीरिया, शैवाल तथा मृदावासी प्रोटोजोआ को सम्मिलित किया जाता है। ये जीव किसी भी क्षेत्र की मिट्टियों के गुणों व विशेषताओं को प्रभावित करते है तथा उसे निर्धारित करते है। बैक्टीरिया तथा कवक अत्यन्त सूक्ष्म जीव होते है जो प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न पोषक तत्वों तथा ऊर्जा के संचरण में सहायक होते है। कवक रसायनपोषी जीव होते है जो मृदा में निम्न कार्य करते है यथाःकवक का निर्माण करना, जैविक पदार्थो का अपघटन करना, जीवित जीवों पर हमला करना तथा पौधो में कई प्रकार के रोगो को जन्म देना आदि। कुछ कवक आर्थिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होते है क्योकि इनका एण्टीबायोटीक दवाओं को बनाने तथा जीवाणुओं (Anzyme) के निर्माण के लिये उपयोग किया जाता है।
- शैवाल तथा कई जीव प्रकाशपोषित सूक्ष्म जीव होते है। ये मिट्टी की सबसे ऊपरी सतह पर निवास करते है। ये मृदा मण्डल में कई प्रकार के कार्य करते है जिससे कि मिट्टी का उपजाऊपन बढता है जैसे– मिट्टी में पाये जाने वाले खनिजों में जैविक पदार्थो की पूर्ति करना, मिट्टी के कणों को जोडकर रखना, मिट्टियों की संरचना को स्थायित्व प्रदान करना ताकि मिट्टियां का अपरदन से बचाव हो सकें। बडे पौधो को पोषक तत्व प्रदान करना, अप्रवाहित मिट्टी में वायु का संचरण करना, वायुमण्डल में मौजूद नाइट्रोजन को प्राप्त करके उसे मृदा में संचित करना।

जैविक पदार्थ

इसके अन्तर्गत जीवित पौधो एवं जन्तुओं के मृत एवं वियोजित भागों को सम्मिलित किया जाता है। इन जैविक पदार्थो का मृदा तंत्र के समस्त जीवों के लिये अत्यन्त महत्व होता है जो निम्न प्रकार से मृदा तन्त्र को प्रभावित करते है जैसे–

1. मृदा में पाये जाने वाले जीवों के लिये ये ऊर्जा तथा आहार का प्रमुख स्त्रोत है।
2. ये सभी प्रकार के पौधो को पोषक तत्व प्रदान करते है जो पौधो की वृद्धि में सहायक होते है।
3. ये मिट्टियों के निर्माण में सहायक होते है।
4. इनमें पौधो तथा जन्तुओं के मरने पर उनसे प्राप्त होने वाले वियोजित पदार्थो को उचित व सतत् निवेश करते है।
5. इनका सूक्ष्य जीवों द्वारा सतत् विघटन एवं वियोजन होता रहता हैं।
6. इन पदार्थो का पारिस्थितिकी तन्त्र में सर्वदा गमन, स्थानान्तरण, संचरण तथा गमन होता रहता है।

खनिज पदार्थ

खनिज पदार्थो को मृदामण्डल का सबसे महत्वपूर्ण घटक माना जाता है क्योकि ये मृदा के निर्माण में सहायक होते है। मृदा के अजैविक पदार्थो के अन्तर्गत खनिज पदार्थो को सम्मिलित किया जाता है यद्यपि मिट्टियों का निर्माण नीचे स्थित आधार शैलो के अपक्षय से होता है। लेकिन यह सदा आवश्यक नही होता है क्योकि यह पाया गया है कि मृदा के खनिजों तथा उसी स्थान पर नीचे स्थित आधार शैल में पाये जाने वाले खनिजों में समता नही होती है इसका प्रमुख कारण यह है कि वर्तमान समय में अधिकांश मृदा आयातित होती है अर्थात अपक्षय व अपरदन से निर्मित मृदा को नदी व हवा के द्वारा बहाकर अन्यत्र जमा कर दिया जाता है जिससे कि मृदा के खनिजों तथा आधार शैले के खनिजों में अन्तर पाया जाता है। आयातित मृदा का प्रमुख उदाहरण जलोठ तथा लोयस मिट्टी है।

मृदा मण्डल में पाये जाने वाले प्रमुख खनिज निम्न प्रकार है– ऑलबिन, आजाइट, बायोटाइट, पोटाश, कैलसिक, क्वार्टज, फेल्सपार, मस्कोवाइट आदि खनिज प्रमुख है। खनिजों के निर्माण, उनका विघटन तथा उनका पुनः निर्माण होता रहता है। मृदामण्डल में ऊपर से नीचे की ओर जाने पर खनिजों का आकार बढता जाता है।

मृदा घोल

मृदा मण्डल में पाये जाने वाले पोषक तत्व स्वतंत्र अवस्था में उपस्थित नहीं होते बल्कि जल में घुले हुए रहते हैं। इस घुलित रूप को मृदा घोल कहते हैं। इस मृदा घोल की गुणवता जल एवं खनिज पदार्थों पोषकता पर निर्भर करती हैं। चूंकी प्रकृति के समस्त जीवों का जीवन पौधों पर एवं पादप अपनी वृद्धि के लिए मृदा घोल पर निर्भर करते हैं। क्योंकि पौधे मृदा घोल में उपस्थित पोषक तत्वों को जड़परासरण की क्रिया ग्रहण करते है। चूंकि इस कार्य में जड़ो का अहम योगदान होता हैं अतः पादपो की जड़े मृदामण्डल में जितनी गहराई तक फैली रहती है वे उतनी आसानी से जल के द्वारा ही आवश्यक पोषक तत्व ग्रहण करती है। अतः मृदा मण्डल में जल एवं पादपों की जड़ो का रहना अत्यन्त जरूरी है। मृदा जल की मात्रा का निर्धारण इस बात पर निर्भर करता है कि वर्षाजल एवं हिमद्रवित जल की कितनी मात्रा अन्तःसंचरण द्वारा मृदा में पहुंचती हैं। मृदा में प्रति समय ईकाई (प्रायः एक घण्टा) में रिसने वाले जल की मात्रा को अन्तःसंचरण की दर कहते है। मिट्टी में इस दर का निर्धारण कई बातों पर निर्भर करता हैं जैसे मृदा की संरचना, गठन, मृदा में जैविक पदार्थो की मात्रा तथा उनकी प्रकृति एवं मृदा में पहले से उपलब्ध नमी की मात्रा द्वारा होता है।

अतः संचरण की यह दर 3 प्रकार की होती है

निम्न अन्तःसंचरण दर

इस दर में 0.25 सेण्टीमीटर जल प्रति घण्टे के हिसाब से मृदा में नीचे की ओर रिसता है मृतिका मिट्टियों में जल का अन्तःसंचरण निम्न दर का होता है।

मध्यम अन्तःसंचरण दर

इसमेज ल 1.27 से 2.54 सेण्टीमीटर जल प्रतिघण्टा की दर से रिसता है। दोमट मिट्टियो में जल का अन्तःसंचरण दर इसी गति से होता है।

उच्च अन्तःसंचरण दर

इसमें जल की मिट्टी में रिसाव की गति 2.54 सेण्टीमीटर जल प्रति घण्टा होती है। रेतीली मिट्टियों में जल के अन्तःसंचरण की दर उच्च पायी जाती है।

मृदाओं में स्थित जल की मात्रा के आधार पर मिट्टी के ठोस पदार्थो, जल तथा वायु के अनुपातों की तीन दशाओं या अवस्थाओं का निर्धारण किया जाता है–

संयुक्त अवस्था

यह वह अवस्था है जिसमें मिट्टियों के नीचे बने सुराख तथा खाली स्थान पानी से भरे होते है और ऐसी स्थिति में वे और अधिक जल की मात्रा को नही सोख सकती है और अतिरिक्त जल मिट्टी की ऊपरी सतह पर प्रवाहित होने लगता है ओर इस जल प्रवाह के जल का सीधा प्रवाह कहते है। मृदा जल की इस अवस्था को पौधो तथा जीवों के लिये लाभप्रद नही माना गया है क्योकि इस अवस्था में जल की मात्रा इतनी अधिक होती है कि मृदा में स्थित जीवों की श्वसन क्रिया बाधित होती है। पेड–पौधो की जड अधिक पानी के कारण सडगल कर नष्ट हो जाती है तथा कई सूक्ष्मजीव–जन्तु तथा वनस्पतियॉ मर जाती है। अतः जल की अधिकता भी हानिकारक होती है।

भूमि क्षमता अवस्था

इस अवस्था में मृदा में स्थित सभी रिक्त स्थानों में से 50 प्रतिशत भाग जल द्वारा भरा होता है तथा शेष 50 प्रतिशत भाग वायु द्वारा ढका होता है तो इस अवस्था को भूमि क्षमता अवस्था कहते है।

क्लोन अवस्था

प्रायः इस अवस्था में जल का सर्वथा अभाव हो जाता है क्योकि मृदा में स्थित जल का कुछ भाग वाष्पिकृत हो जाता है तथा कुछ भाग पौधो की जडों द्वारा सोख लिया जाता है जिससे की मृदा में पानी का अभाव हो जाता है अतः इस अवस्था को क्लान अवस्था कहते है। इस अवस्था में पौधे पानी के अभाव के कारण मुरक्षा कर सुख जाते है व धीरे धीरे नष्ट हो जाते है।

हालांकि इस अवस्था में भी मृदा के रिक्त स्थानों के 25 प्रतिशत भाग में पानी होता है। लेकिन यह बहुत गहराई में होता है जिससे कि पौधे इस जल का उपयोग नही कर पाते है। अतः कलान अवस्था भी पौधो के लिये अनुपर्युक्त होती है। इसमें पौधो को पानी न मिलने के कारण नष्ट हो जाते है। अतः भूमि क्षमता अवस्था तथा क्लान अवस्था के बीच की स्थिति मिट्टियों में स्थित पौधो तथा विभिन्न प्रकार जीव–जन्तुओं के लिये सर्वाधिक उपर्युक्त होती है।

मृदा वायुमण्डल

मृदा के वायुमण्डलीय संघटकों में मुख्यतः मृदा में पाये जाने वाली विभिन्न गैसो तथा हवा की उपस्थिति, वायु का संचरण तथा मृदा के विभिन्न संस्तरों में तापमान के वितरण का अध्ययन किया जाता है। मृदा मण्डल में तथा भूमि की ऊपरी सतह पर ऑक्सीजन तथा कार्बनडाई ऑक्साइड गैसों का अनुपात भिन्न–भिन्न पाया जाता है जो निम्न तालिका द्वारा दर्शाया गया है।

मृदामण्डल के वायुमण्डल का संघटन

क्र.सं.	वयुमण्डल का स्तर	O_2 (प्रतिशत)	CO_2 (प्रतिशत)	N_2 (प्रतिशत)	जल वाष्प (प्रतिशत)
1.	भूतल के ऊपर का वायुमण्डल	20.97	0.03	79.0	100 से कम
2.	घास मैदान की मृदा का वायुमण्डल	18.40	1.60	79.02	प्रायः 100
3.	कृषि योग्य मृदा का वायुमण्डल	20.70	0.10	79.02	प्रायः 100

निष्कर्ष

अतः उपरोक्त विवरणों से यह ज्ञात होता है कि मिट्टियों में निवास करने जीवों, विभिन्न प्रकार के पौधो के अस्तित्व व विकास के लिये जल तथा वायु एक निश्चित अनुपात में महत्वपूर्ण कारक है क्योकि वनस्पतियों तथा कृषि फसलों के उचित विकास के लिये पौधो को जड़ो को पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन की आवश्यकता पडती है यदि मृदा लम्बे समय तक तर तथा अतिसंतृप्त रहती है तो उस स्थिति में वायु में श्वसन की क्रिया मन्द पड जाती है तथा परिणामस्वरूप कई पौधे मर जाते है। मृदा में जल व वायु की मात्रा की तरह ही मृदा का तापमान भी मृदा के जीवों के विकास व वृद्धि के लिये एक आवश्यक महत्वपूर्ण कारक होता है। मृदा का तापमान भी कई कारकों से प्रभावित रहता हैं जैसे– सूर्य का ताप तथा भूमि के सतह के तापमान का विषुवत रेखा से ध्रुवों तक क्षैतिज वितरण, वनस्पतियों द्वारा पडने वाली छाया, मृदा में ऊष्मा ऊर्जा का प्रवेश, वायु तथा मृदा में ऊष्मा का विनिमय, मिट्टियो द्वारा अपने अन्दर ऊष्मा धारण करने की क्षमता, मिट्टियों द्वारा ऊष्मा का विसरण, मिट्टियों में जैविक पदार्थो की उपस्थिति तथा उनकी मात्रा आदि।

पादप शारीरिकी की वृद्धि व विकास का नियंत्रण मृदा के तापमान पर निर्भर करता हैं। क्योंकि जड़ो द्वारा परासरण, बीजों में अंकुरण जैसी जैविक क्रियाएं वृहद स्तर पर मृदीय तापमान द्वारा प्रभावित होती है। इसका अर्थ इस बात से समझा जा सकता है कि भूमि ताप के अभाव में न तो मिट्टियों में खनिज निर्माण की प्रक्रिया सम्पन्न हो पाती हैं तथा न ही जैविक विघटन की प्रक्रिया के सुचारू संचालन हेतु सूक्ष्म जीवों की वृद्धि हो पाती हैं। कम तापमान वाले प्रदेशों की मिटटी में पोषक तत्वों की कम मात्रा पायी जाती हैं जिसका कारण जैविक पदार्थो की कम वियोजन दर है। यदि 10 डिग्री सेण्टीग्रेड से कम तापमान हो जाये तो जैविक पदार्थो के वियोजन की दर भी अत्यन्त कम हो जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि भूमि के खनिजीकरण की दर तथा जैविक पदार्थो के विघटन की प्रक्रिया धरातलीय तापमान के समानुपाती होती हैं। यही कारण है कि उच्च तापमान वाले उष्णीय प्रदेशो में वनस्पतियों व कृषि फसलों का अधिकतम उत्पादन होता है। इसका कारण जैविक अपघटन की दर का उच्च होना हैं जो मृदा में पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाता हैं।

संदर्भ

1. Statistical Abstract. Directrate of Economics and Statistal, Rajasthan, Jaipur; c2008.
2. Vayas V. Water Maps G.I.S. and Development. Sinha R.K. 2000 Desert Management and Desertification control Shri Publication, Jaipur. 2001;5:32-34.
3. World Bank, World Development Indicators; c2000.
4. Statistical Abstract of Haryana. Economic and Statistical Organization, Planning Department, Govt. of Haryana, Chandigarh; c1999.
5. Verma DC, Sukhbir Singh. Haryana. National Book Trust, India, New Delhi. Singh, R.K. (1997), "Efficient Irrigation Management through Sprinkler System and its Planning", Seminar on Irrigation, Government of Rajasthan; c1999.
6. Suraj Bhan. Water Management in Crops, Indian Agricultural Research Council, New Delhi; c1995.

7. Sivanappanm RK. Prospective of Micro-Irrigation system in India", Irrigation and Drainage system. Yadav, S.B. (1994) Resources and Socio-Economic Development in Haryana. Unpublished Ph.D. Thesis Deptt. Of Geog., Univ. of Rajasthan, Jaipur; c1994;8(1):49-58.
8. Singh V. Regional Disparities in Agricultural Development, Deep and Deep Publications, New Delhi; c1990.
9. Sukhbir Singh. Impact of Green Revolution on the Socio-economic and Political Life of Haryana. Symposium Volume, New Delhi; c1990. p. 1-19.